PUNE RESEARCH SCHOLAR ISSN 2455-314X
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY JOURNAL VOL 3, ISSUE 3

नारी - अस्मिता और भारतीय हिंदी सिनेमा

प्रा. सौ. डॉ. पिंजारी विजया जगन्नाथ
यशवंतराव चव्हाण महाविद्यालय, पाचवड
मु. पो. पाचवड, ता. वाई, जि. सातारा
महाराष्ट्र भारत

हिंदी सिनेमा को अब सौ वर्ष पुरे हो चूके है। इन सौ वर्षों में हिंदी में हजारो फिल्में बनी, हिंदी सिनेमा समृध्द हुआ। अपने आरंभीक काल से ही हिंदी सिनेमा ने भारतीय समाज के साथ तालमेल रखकर चलने ा प्रयास किया। इस प्रयास में समाज ने सिनेमा को और सिनेमा ने समाज को प्रभावित किया। हिंदी सिनेमा में भारतीय समाज की आधी आबादी की बात तो उठती ही है। हिंदी सिनेमा ने भारतीय नारी के नाना रूपों और रों को अपने ढंग से व्यक्त किया है। नारी के शरीर से लेकर मन तक और मन से आत्मा तक पहुँचने का प्रयास हिंदी सिनेमा ने कभी प्रत्यक्ष रूप से तो कभी अप्रत्यक्ष रूप से किया है। कुछ फिल्मों में नारी के सशक्त एवं उदात्त रूप के दर्शन मिलते है तो कुछ फिल्मों में उनका सृजनात्मक रूप रहा है तो कुछ फिल्मों में उनका संहारात्मक रूप भी नजर आता है।

ऐसी ही कुछ फिल्मों को माध्यम बनाकर नारी अस्मिता के विराट रूप को इस आलेख में परिभाषित करने का सुखद प्रयास किया गया है।

उसमें कोई संदेह नही है कि पिछले सौ वर्षों में अनमिनत नारी चरित्र हिंदी फिल्मों में चित्रित हुए है। हिंदी की जिन फिल्मों में नारी के बहिरंग से लेकर उसके अंतरंग तक अभिव्यक्त हुआ है, उसकी सूची बहुत लंबी है। इसलिए यही सही होगा की हिंदी की कुछ क्लासिक तथा कालमयी फिल्मों के माध्यम से नारी की अस्मिता को पहचानने की कोशिश की जाए। उसकी सूची छोटी नही है जिसमें नारी शक्ति को रेखांकित किया गया है। उसे उच्चतर मानव - मूल्यों के साथ प्रस्तुत किया गया है, लेकिन कुछ अविस्मरणीय फिल्मों का उल्लेख एक ऐतिहासिक कम में अवश्य किया जा सकता है, जिसमें भारतीय नारी का गौरव

और उसकी गरिमा व्यक्त हुई है तथा जो फिल्में हिंदी सिनेमा के इतिहास में नारी विमर्श के लिए ही मील का पत्थर मानी जाती है।

इस दृष्टि से जिस फिल्म की चर्चा सर्वप्रथम आवश्यक जान पडती है। वह है १९३६ में रिलीज पहली फिल्म 'अछूत कन्या' दुखिया हरिजन अछूत है उसकी बेटी 'कस्तुरी' ब्राम्हण युवक प्रताप से प्रेम करती है दोनों भी एक दूसरे से बेहद प्रेम करते है। दोनों प्रेमविवाह करना चाहते है किन्तु उन्हें उग्र सामाजिक विरोध हो जाता है इस फिल्म में वर्ग और जातीय संघर्ष प्रस्तुत हुआ है। छुआछूत की गंभीर समस्या और इस समस्या की शिकार नायिका कस्तुरी अपने मन में अनुराग पालती है। इस फिल्म के कारण आज भी युवती के निश्चल प्रेम और सामाजिक यंत्रणा को लोग भूल नही पाते।

'अंदाज' नारी संघर्ष की दृष्टि से यह फिल्म जितनी अपने समय में चर्चित थी, आज के समय में भी वह उतनी प्रसांगिक प्रतीत होती है। यह एक प्रेमकथा है। यह एक ट्रैनिक प्रेम कथा थी। नर्गिस ने अभिनय किया। एक नारी दो पुरूषों के बीच तब भी पिसती थी और आज भी पिसती है। पुरूष नारी पर अपना एकाधिकार समझता है। उसे इतनी भी स्वतंत्रता नहीं दे सकता कि वह किसी पुरूश को अपना मित्र समझे। यदि वह ऐसा समझती है, तो उसे जीवन भर बाहय और आंतरिक यातनागृह में ही तडपना पडता है। नीना ने जीवन में जिसे मित्र समझा, उसे प्रेम किया उसने पर-पुरूष से जोडकर उसे लांछित तथा अपमानित किया। यह चित्र आज भी. सन १९५१ में निर्मित फिल्म 'आवारा' नारी अस्मिता की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण क्लासिक फिल्म मानी जाती है। इस फिल्म में एक और नारी की ताकत तो दूसरी और नारी कि विवशता को दर्शाया गया है। नारी की मजबूरी से नारी की मजबूरी तक की कहानी बयान की गई है। लोला चिटनिस में एक मॉ की विवशता को प्रस्तुत किया है तो नर्गिस ने एक वकिल की भूमिका अदा की है। हमारे समाज में ए मॉ और एक पत्नी की बेबसी भी मौजूद है। एक विपरीत दिशा में आने पर वह घोषणा भी करती है कि मैं कुछ भी कर सकती हूँ।

१९५५ में निर्मित तथा निर्देशित फिल्म 'देवदास'। देवदास का जीवन चारो से शुरू होता है और पारो पर आकर समाप्त होता है। आज भी जहॉ युवतियों की इच्छा के विरूध्द सामाजिक मान-अपमान का हवाला देकर उनका जबरन विवाह करा दिया जाता है। पारो की भॉति बेमेल विवाह अब भी हो रहे है। जब भारतीय नारी किसी को अपना पति मान लेती है तो वह अपनी पत्नी धर्म का निर्वाह किस सिमा तक करती है। इसका मिसाल है

पारो का जीवन। एक तरफ चंद्रमुखी देवदास के प्रेम में अपनी वृत्ति का त्याग करती है। तो दूसरी तरफ पारो ने अपने आकांक्षित जीवन का त्या किया। ये दोनो भारतीय नारी के त्याग की आदर्श है। दोनो ने अपना बलिदान दिया, एक ने मानसिक स्तर पर तो दूसरीने मानसिक स्तर प। यह है भारतीय नारी की अस्मिता।

१९५७ में प्रदर्शित 'मदर इंडिया' हिंदी की एक ऐसी फिल्म है, जिस पर भारतीय सिनेमा गर्व और गौरव का अनुभव करता है। इस फिल्म ने हिंदी सिनेमा को एक वैश्विक स्तर प्रदान किया है।

ऑक्सर पुरस्कार प्राप्त भारतीय हिंद सिनेमा की पहली फिल्म 'मदर इंडिया' है। इस फिल्म ने भारतीय नारी के त्याग, बलिदान और साहस को जिस तरह से स्थापित किया है, वह अव्दितीय है, अनुकरणीय है। यह फिल्म एक महान मानवीय संदेश है, जो कभी न धुंदली हो सकती है और न कभी मीट सकती है। एक मॉ अपने ही कोख से जन्मे एक बदचलन बेटे की हत्या करके गॉव और गॉव की बेटी की रक्षा करती है। जिसकी नियम मॉ के प्रति हमेशा बुरी रही, उसकी हत्या जिस मा।क का बेटा कर देता है। वही मॉ उसके बेटी की इज्जत की खातिर अपने ही बेटी को मार डालती है। भारतीय महिला की शक्ति, ममता, धैर्य क्षामा और त्याग इस फिल्म में दर्शाया गया है। यही वजह है यह फिल्म हिंदी सिनेमा के इतिहास में अभूतपूर्व मानी जाती है।

गुरूदत्त व्दारा निर्मित तथा अबरार आलवी व्दारा निर्देशित १९६२ की फिल्म 'साहब, बीवी और गुलाम' श्रेष्ठ फिल्मों में साहब, बीवी और गुलाम भी एक है। सामंती परिवार की कथा को आधार बनाया गया है। मीनाकुमारी ने अत्यंत संवेदनशील अभिनय किया है। इसे एक अंतर्मुखी फिल्म के रूप में भी देखा जाता है कथावस्तु अविस्मरणीय है। एक ओ नारी निरंतर अपने पति की उपेक्षा और उदासिनता का शिकार होती है, लेकिन क्षणभर के लिए भी उसके मन में पर पुरूष के प्रति शारीरिक या मानसिक आकर्षण पैदा नही होता है। वह बार-बार किसी-न-किसी प्रयास से अपने ही पति को अपने पास वापस बुलाने के लिए छटपटाती और तडपती रहती है। किसी अन्य पुरूष को अपने हितैषी के रूप में अवश्य स्वीकार करती है, लेकिन वह उसके साथ व्यभिचार नही करती। यह है नारी के पत्नी धर्म की गरिमा और मर्यादा। अपने बदचलन पति के लिए ईश्वर से वह प्रार्थना करती है। अपने पती की रक्षा करते हुए वह असामयिक मृत्यु या हत्या की शिकार होती है, इससे बढकर नारी की हृदयविदारक स्थिती और नियति और क्या हो सकती है।

१९६३ में विमल रॉय व्दारा निर्देशित फिल्म 'बंदिनी' एक यादगार फिल्म है। 'सुजाता' और 'बंदिनी' एक यादगार फिल्म है। 'सुजाता' और 'बंदिनी' दोनो नारीप्रधान फिल्में है। 'बंदिनी' नारी की समस्या और संवेदना को उभारनेवाली एक बेहतरीन फिल्म है। नायिका विकास के प्रेम में पहले बंदिनी थी, फिर देवने के प्रेम का बंधन उसके सामने आया और अंत में वह पुन: किसी की सेवा की बंदिनी बनी। इस फिल्म को देखते हुए एक बात स्पष्ट होती है। अपने पवित्र प्रेम, त्याग, सेवा तथा समर्पण के बावजूद भारतीय नारी किसी-न-किसी स्तर पर एक बंदिनी होने की नियती ही झेलती है। भारतीय नारी के अंत:चरित्र को यह फिल्म बडी शिद्दत से पेश करती है।

१९७२ में प्रदर्शित फिल्म 'अमरप्रेम' यह एक क्लासिक हिंदी फिल्म है। अमरप्रेम तो वास्तव में प्रेम की अमरगाथा बनी। यह फिल्म संदेश देती है कि भले ही कोई नारी वेश्यावृत्ति के लिए किसी भी कारण से विवश हो, लेकिन यह नही भूला जा सकता है कि वह भी एक मनुष्य है, सबसे बढकर एक नारी है आरैर उसमें मानवोचित संवेदनाए उतनी ही गहरी होती है। जितनी किसी अन्य नारी में। नायिका पुष्पा का नारी होना उसके वेश्या होने पर भारी पडता है और समाज के सामने वह एक मिसाल कायम कर पाती है। इसका सजिव चरित्र है पुष्पां। वह आनंद बाबू को बदनामी से बचाने के लिए जानबुझकर बदनामी से दूर रहती है। वह बहुत बडा दृष्टांत जीवन में है। एक ओर आनंद बाबू, दूसरी ओर पुष्पा और तीसरी ओर नंदू, तीनो अकेले ीि, ममता और प्रेम के प्यासे थे। जिससे उनमें हर एक का जीवन अधूरा था। जब वे एक हो जाते है, तो जैसे एक परिवार भी पूरा होता है और मानवता भी पूर्ण होती है। मानवता की पूर्णता का श्रेय जाता है एक नारी को। उसकी महानता ही मानवीयता का आधार बनती है।

१९७२ में कमाल अमरोही व्दारा निर्मित फिल्म 'पाकीजा' हिंदी की एक श्रेष्ठ, कलात्मक, क्लासिक तथा कालजयी फिल्म है। यह फिल्म मुस्लीम समाज में जकडे बंधनों को दर्शानेवाली फिल्म है। इससे बढकर और त्रासदी क्या हो सकती है कि समाज में एक तथाकथित सभ्य कहलाने वाले व्दार से जब एक और को घर से निकाल दिया जाता है, तब उसे अपना प्रसव कब्रिस्तान में करना पडता है। शायद नारी का जन्म ही ऐसे अभिशापों को झेलने के लिए होता है। दूसरी ओर एक नारी अपने बीना मॉ की बच्ची को लाकर अपनी बेटी की तरह पालती है। एक राजकुमार उस लडकी से प्रेम करता है पर उसे अपनी साहाबजादी के रूप में नही रख पाता। वह उसे पाकिजा बनाना चाहता है। अंत:

उसका जीवन कोठे से शुरू होता है और कोठे में ही उसका अंत होता है। नारी के लिए इससे बढकर अपमान और अभिशाप क्या हो सकता है। उसी राजकुमार के विवाह में उस लडकी को नाचना और गाना पडता है। वहॉ उसका पिता भी होता है और वह उस बात से बिल्कुल निर्मन हुआ करती है।

१९७२ में प्रकाशित फिल्म 'गाईड' की रोजी, अप्रतिम सुंदर होती है। एक कलाकार होती है, नृत्यांगना होती है। उसकी खूबसुरती का दिवाना मांगे उससे विवाह करता है। उम्र के हिसाब से वह बेमेल विवाह होता है। मांगो अपने आप में पूर्ण पुरूष नही होता वह विवाह तो रोजी से करता है। उसे चैन आराम की जिंदगी तो देता है लेकिन शरिरसंबंध एक निम्नवर्गीय स्त्री के साथ रखता है। रोजी की वह उपेक्षा करता है त्रस्त रोजी उसे त्याग देती हैं राह चलता राजू गाईड उसे सबल बनाता है। उसकी सहायता से वह एक कलाकार बनती है। अंत में वह भी उसका आर्थिक शोषण करता है। अंत में रोजी जान जाती है दोनो पुरूषों की नजर में वह केवल माध्यम मात्र है और कुछ नही ।हम देखते है समाज में नारी के प्रति दृष्टिकोन भी कुछ इसी प्रकार का है।

में प्रदर्शित 'अर्थ' फिल्म में शबाना की आझमी ने एक पत्नी होकर जिस चुपचाप तरीके से अपने अस्तित्व की स्वतंत्रता को घोषित किया, वह काबिले तारिफ है। दूसरी स्त्री के साथ संबंध बना लेने और फिर वापस अपनी पत्नी के पास पहॅचनेवाले पति को न केवल उसने अस्वीकार किया बल्कि अपनी आया की लडकी को स्वीकार करे अपनी जिंदगी नये सिरे से शुष करती है। औरत को एक स्तंत्रयेता व्यक्ति के रूप में दिखानो का इस फिल्म में दुराग्रह किया और उसमें यह फिल्म पूरी तरह सफल रही। एक स्वतंत्र किंतु दृढस्वभाव को उस ऊॅचाई पर पहुॅचा दिया, जहॉ हर औरत पहुॅचना चाहती है।

ऋषिकेश मुखर्जी और गुलजार भी अपनी सबल नारी पात्रों के लिए प्रसिध्द रहे है। 'खूबसुरत' की रेखा तथा 'ऑधी' की सुचित्रा सेन इसका समर्थ प्रमाण है। समानांतर फिल्मों में श्याम बेनेगल स्त्री अस्मिता के पक्षाघर रहे है। उन्होनें बार-बार अपनी फिल्मों से इसे प्रमाणित किया है। फिल्म 'अंकुर' में पहली बार एक स्त्री के विवाहेतर संबंध को उसके पति ने स्विकार किया और उसकी गर्भस्थ संतान को अपनाया 'भूमिका' फिल्म में उन्होने स्मिता पाटील को एक अभिनेत्री के सभी रंगों मे बडी क्षाता के साथ प्रस्तुत किया था। आगे कई फिल्मों में नारी सशक्तिकरण का पर्याय बन गई थी।

केतन मेहता की 'मिर्चमसाला' उनमें से एक फिल्म है। जिस फिल्म में अन्याय के प्रतिरोध में नारी खडी हो जाती है। उनमें 'खून भरी मांग' एक प्रमुख फिल्म है। फिल्म 'दामिनी' में इस बात को रेखांकित किया गया है कि घर गृहस्थी के घेरे में रहकर भी एक स्त्री अन्याय के विरूध्द अत्यंत सबला रूप से आवाज उठाती है। माधुरी दीक्षित की बेखौफ मुद्रा को कौन भुला सकता है। हाल की पिक्चर 'गुलाब गैंग' में तो स्त्रियों ने अनाचार के विरूध्द सामूहिक मोर्चा ही खोल दिया है।

फिल्म 'इंगलिश-विंगलिश' की शशि की दास्तान दूसरी है। एक समझदार, मेहनती, सबका खयाल रखनेवाली गृहिणी है। विदेश मे एक फ्रेंच युवक उसे पसंद करता है। वह कुछ और आगे बढकर उसे आगाह करते हुए कहती है 'मुझे प्यार नही बस थोडी सी इज्जत चाहिए। 'सदियों से एक भारतीय स्त्री के मन में उठती इस पुकार को शशि ने कितनी सहजता से कह दिया। 'मेरी कॉम' गरीबी से संघर्ष करते हुए मुक्केबाजी का आभ्यास नारी रखती है और वहॉ पहुँचकर दम लेती है, जहा उसे पहुँचना है।

यों तो हिंदी में ऐसी सेंकडो फिल्में है, जिनमें नारी-विमर्श मिलता है तथा नारी की अस्मिता को परिभाषित तथा व्याख्यापित करने का प्रयास किया गया है। हिंदी की इन चंद क्लासिक, कलात्मक तथा कालजयी फिल्मों ने नारी की जिस पीडा, अपमान, अभिशाप, यातना और यंत्रणा का चित्रण किया है। वह आज भी हमारी गहरी संवेदना का विषय है। इसक विपरीत हिंदी सिनेमा ने नारी के आदर्श, त्याग बलिदान, ममता के जो रंग दिखाए वह हमें आश्वस्त करते है कि सिनेमा समाज की आधी आबादी के प्रति संवेदनशील था, है और रहेगा बावजूद सारी गिरावट, नैतिक पतन, अवमूल्यन और उसके सेक्स इमेज के बाजारीकरण के। नारी की अस्मिता, मर्यादा, गरिमा और गौरव का उसका सात्विक और सनातन बिम्ब कभी पूरी तरह खंडित नही होगा। यह जब तक समाज में सुरक्षित है, सिनेमा में भी रहेगा।

संदर्भ पुस्तके

१ नारी अस्मिता और भारतीय हिंदी सिनेमना - डॉ मुदिता चंद्रा डॉ जूही समर्पिता
२ भारतीय सिनेमा और नारी अस्मिता - डॉ शारदा प्रसाद
३ सिनेमा, समाज और नारी - आनंद बाला शर्मा